eISSN 2581-8996
ONLINE
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 07, Special Issue 01, February 2024

हिन्दी साहित्य में कबीर का हिन्दू– मुस्लिम समाज के समन्वय का स्वरूप

[1]प्रो. कांती शर्मा
[1]प्राचार्य, राजकीय महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सिरसागंज फिरोजाबाद, उत्तर प्रदेश

Received: 17 Dec 2023, Accepted: 15 January 2024, Published online: 01 February 2024

Abstract

कबीर के सोचने का एक अनूठा तरीका था। उन्होंने आजादी की आखिरी बूंद तक पिया। कबीरदास ऐसे कवि थे जो संत, भक्त समाज सुधारक और फकीर थे. जिनकें जैसा आज तक न कोई हुआ और ना ही शायद होगा। कबीर के समय समाज में हिंदु पर मुस्लिम आतंक फैला हुआ था उन्होंने ऐसा मार्ग अपनाया जिससे समाज में फैली बुराईयों को दूर किया जा सके। कबीर कालीन समाज की दशा अन्यन्त सोचनीय थी । सम्पूर्ण सामाजिक व्यवस्था, जातिगत अत्याचार – आचार विचार, वंशगत ऐश्वर्यमद एवं उंच–नीच की भावना पर आधारित थी। कबीर यह देखकर अत्यन्त क्षुब्ध थे कि धर्म के नाम पर पूरा समाज पाखण्ड और बाहरी आचार से ग्रस्त थे। योगी योग में ध्यान लगाकर उन्मुक्त थे, पण्डितों को पुराण का अहंकार था, तपस्वी तम के अहंकार में ढूबे थे, मुल्ला को कुरान पढ़ने का शौक था और काजी को न्याय करने का गर्व था। वस्तुतः सभी मोह ग्रस्त थे और सन्मार्ग से भटक गये थे। सारा समाज मिथ्या प्रपंच में अनुरक्त था। इस प्रकार सामाजिक वैषम्य का कबीर ने घोर विरोध किया। कबीर ने जिस समाज को देखा वह अहंकार, अज्ञान, आत्मप्रदर्शन अंधश्रद्धा पाखण्ड, धूर्तता आदि में आकण्ठ मग्न था। सारा वातावरण दम छोटू था, माननीय चेतना का जीवन्त पक्ष लुप्त हो चुका था। अतः कबीर ने इस जर्जर व्यवस्था पर निर्ममतापूर्वक प्रहार करते हुए मानवीय मूल्यों पर खरी उतरने वाली सर्वकालिक तथा सार्वभौमिक शिक्षा दी। उन्होंने इस जड़ता को नकारते हुए आडम्बरहीन समाज रचना का प्रयास किया। उनमें जो खण्डनात्मक वृत्ति मिलती है, उसके लिए तत्कालीन परिस्थितियां ही उत्तरदायी है। उन्हें लगा कि कथनी और करनी में यह वैषम्य समाज को रसातल लिए जाता है।

बीज शब्द– अद्वैत–दर्शन, निर्गुणवाद, सगुणवाद, एकेश्वरवाद, साम्प्रदायिकता, ब्रह्म।

Introduction

संत कबीर का प्रेम तत्व सुफियाना है। परन्तु उनमें भी उन्होंने भारतीयता का पुट दे दिया है। इस प्रकार निर्गुणवाद और सगुणवाद की एकेश्वरवाद से बाहरी समता रखनेवाली बातों के समिश्रण और उसने योग से कबीर की भक्ति का निर्माण हुआ। मजहब क्या है ? मजहब एक संघटित धर्म–मत है। बहुत से लोग एक ही देवता को मानते है, एक ही आचार का पालन करते हैं और किसी नस्ल कबीले या जाति के किसी व्यनित को जब एक बार अपने संघटित समूह में मिला लेते हैं तो उसकी सारी विशेषताएं दूर कर उसी विशेष मतवाद को स्वीकार कराते है। भारतीय समाज नाना जातियों समिश्रण था। एक जाति का एक व्यक्ति दूसरी जाति में बदल नहीं सकता, परन्तु मजहब इसके ठीक उल्टा है। वह व्यक्ति को समूह का अंग बना देता है। भारतीय समाज की जातिया कई व्यक्तियों का

©IJARMS JOURNAL, 2024

eISSN 2581-8996
ONLINE
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 07, Special Issue 01, February 2024

संग्रह है । परन्तु किसी मजहब के व्यक्ति वृहत् समूह के अंग है। एक का व्यक्ति अलग हस्ती रखता है पर अलग नहीं हो सकता दूसरे का अलग हो सकता है पर अलग सत्ता नहीं रखता है ।मुसलमानी धर्म एक मजहब है। भारतीय समाज संगठन से बिल्कुल उल्टे तौर पर उसका संगठन हुआ था। भारतीय समाज जातिगत विशेषता रखकर व्यक्तिगत धर्म – साधना का पक्षपाती था, इस्लाम् जातिगत विशेषता का लोप करके समूहगत धर्मसाधना का प्रचारक था। एक का केन्द्र बिन्दु चारित्र्य था, दूसरे का धर्ममत। भारतीय समाज में यह स्वीकृत तथ्य था कि विश्वास चाहे जो भी हो, चरित शुद्ध है तो व्यक्ति श्रेष्ठ हो जाता है। फिर चाहे वह किसी जाति का भी क्यों न हो। हिन्दु–समाज धार्मिक समानता को स्वीकार करने के पक्ष में था. पर किसी व्यक्ति – विशेष को धर्ममत में ग्रहण करने का पक्षपाती नहीं था। उधर मुसलमानी समाज व्यक्ति को अपने धर्ममत में शामिल कर लेने को परम कर्तव्य समझता था, परन्तु किसी विशेष धर्म साधन को अपने किसी व्यक्ति के लिए एकदम वर्जनीय मानता था।

इस प्रकार कबीर ने धर्म–निरपेक्षता से काम लिया उनके लिए हिन्दु मुसलमान दोनों समान थे। कबीर वाणी का यह सामाजिक सत्य व्यक्तिगत न होकर सामूहिक है।

- कबीर की दार्शनिक पृष्ठभूमि

कबीर की दार्शनिक चेतना के बारे में पंडितों के नाना मत सामने आते है। छान–बीन होती रही है और बात आकर लगभग यहाँ टिक गई है कि कबीर पर विभिन्न मतों दर्शनों का प्रभाव था। वे सत्याग्रही थे, अतरू ऐसा अस्वाभिक न था. फिर भी वे शंकर वेदान्त से सर्वाधिक प्रभावित थे। जही तक परमतत्व के सम्बन्ध में बात है, यधपि विशिष्टा दैतवाद, एकेश्वरवाद, औपनिषदिक ब्रह्मवाद आदि की चर्चाएं होती रही है।

- कबीर और मानवता

मनुष्य एक मूर्त इकाई है जबकि मानवता एक अमूर्त प्रत्यय है। मानवता को शाश्वत धर्म के रूप में ग्रहण किया जा सकता है जबकि धर्म भी एक अमूर्त प्रत्यय है। अपनी विशवता और शुचिता के कारण धर्म एक गतिशील विश्वास भी है। भारत ही नहीं, विश्व–सन्दर्भ के ऐतिहासिक और सांस्कृतिक परिपार्श्व का अध्ययन किया जाये तो प्रत्यक्ष होगा कि असख्य धर्मो में मानव धर्म ही श्रेष्ठ है। यह बात मान लेने में किसी के लिए फर्क नहीं होगा कि दुनिया की श्रेष्ठतम वस्तु मनुष्य है। सुना जाता है कि मनुष्य होने के लिए देवता और पैगम्बर भी तरसते हैं और कदाचित् मनुष्य के रूप में अवतरित होने का सौभाग्य उन्हें मिल गया तो उसकी महिमा और बढ़ जाती है। मनुष्य न होता तो देव, दानव, ईश्वर, अल्लाह और वाहे गुरू जैसी गरिमाओं को आकार कहाँ से मिलता? अतः जाहिर है कि मनुष्य सृष्टि की श्रेष्ठतम् अवधारणा का एक पर्याय है। मानवीय गुणों या कि मानव धर्म के सम्यक विकास से सम्बद्ध होने के कारण ही मनुष्य की कोई पहचान है। कबीर मानवता के पर्याय है। मानवता की रचना जिन अमूर्त तन्तुओं से होती है उनमें करूणा, त्याग, प्रेम, क्षमा, ममता, सहिष्णुता, सेवा, विश्वास और समर्पण जैसे कारक सहायक बनते है। इन शाश्वत मूल्यों का संवर्द्धन

eISSN 2581-8996
ONLINE
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 07, Special Issue 01, February 2024

जिसने कर लिया है, वह मनुष्य है और इनके आलोक में किये जाने वाले उसके कार्य मानवता सूचक है।

शाश्वत के त्याग और शाश्वत की स्वीकृति ही मानवता है। भारतीय सन्दर्भ में देखा जाय तो इस संस्कृति का आदर्श वाक्य है,वसुधैव कुटुम्बकम्श वेदयुगीन ऋषि–कामना का चरम उत्कर्ष इसी में मिलता है। अपने यहाँ का चाहे अद्वैत–दर्शन हो अथवा अन्य शास्त्र–बोध। सभी सर्वत्र ईश्वरीय–व्यप्ति की परिकल्पना करते है। प्राणी चाहे जिस जाति का, मजहब का हो, सभी का परमपिता एक है। हमारी धार्मिक संकल्पनॉए इतनी जीवन्त है कि उसमें सर्वत्र मानवता के अर्जन का सन्देश है। नीति ग्रन्थ तो इस बात के सबल गवाह है –

अयं निज परोवेत्ति गणना लघुचेतसाम् ।

उदारचरितामां त वसुधैव कुटुम्बकम् ।। (पंचतन्त्र)

आशय यह कि यह मेरा है, यह तेरा है जैसी संकीर्ण भावना का परिचय शूद्र प्राणियों की संवेदना है, परन्तु उदारचित वाले प्राणी सम्पूर्ण धारा को अपना कुटुम्ब समझते है। कदाचित यही उदारवादिता मानवता की पोषिका होती है। धार्मिक सहिष्णुता एवं शांति प्रियता मानवता की एक विशिष्ट पहचान है। भाषा, धर्म, सम्प्रदाय और संस्कृति में ऐक्य–स्थापन का भाव मानवतावाद का अन्य परिचय है। कबीर साहित्य का अनुशीलन यदि इन दृष्टियों से किया जाय तो उभरने वाली प्रमुख और गहरी रेखा मानवतावाद की मिलेगी। कबीर के विचारक तो यहाँ तक मानते हैं कि उन्होंने मनुष्य मात्र में एक दी दिव्य ईश्वरीय ज्योति के दर्शन किये थे और इसी आधार पर मानव मात्र की एकता का प्रतिपादन किया था। वे सच्चे अर्थो में मानवतावादी या मानवधर्मी कहे जा सकते है।

- कबीर के काव्य में मानव मूल्यों की तलाश

हिन्दी साहित्य का संतकाव्य रचना धर्मिता सामाजिक–साँस्कृतिक चेतना, मूल्य चेतना और भावात्मक सौन्दर्य की अभिव्यक्ति की दृष्टि से बेजोड़ है। इस काव्य का अपना एक अलग सामाजिक–सांस्कृतिक इतिहास है जिसे राजनीतिज्ञो अथवा इतिहाज्ञो में नहीं लिया है। इस इतिहास को लिखा है इन सन्तों ने, जिन्होंने एक सामाजिक व्यक्ति की हैसियत से समकालीन सामाजिक और आर्थिक व्यवस्था की विसंगतियों, अलगावों, असमानताओं, विरोधाभासों एवं द्वन्द्वों को से देखा ही नहीं, भोगा भी है। इस भागे हुए यथार्थ को एहसास करने और कराने वाले रचनाकारों में कबीर अग्रगण्य है। वे एक सामाजिक और मानवीय रचनाकार है जिनकी मूल्य चेतना की अहमियत इसलिए है कि उन्होंने हिन्दू–मुस्लिम संस्कृतियों की असंगतियों और अन्तर्विरोधों को समझकर एक मिली–जुली संस्कृति का निर्माण किया है। उनकी सामाजिक और सांस्कृतिक मूल्यचेतना मध्यकालीन सामन्ती मूल्यों को अवश्य प्रक्षेपित करती है। पर यह सामन्ती मूल्य उनके काव्य का वास्तविक मूल्य नहीं है। यह केवल यथार्थ मूल्यों के उपजाने में सहायता प्रदान करती है। उनकी वास्तविक मूल्यचेतना लोकचेतना है। जो सामन्ती मूल्यचेतना के समान्तर ही पल्लवित विकसित होती है। उनकी कविता में मूल्य चेतना का जो स्वरूप हमें साफ तौर पर दिखलाई पड़ता है, वह कई दिशाओं से जुड़ा हुआ

eISSN 2581-8996
ONLINE
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 07, Special Issue 01, February 2024

है। इन विभिन्न दिशाओं के परिप्रेक्ष्य में कबीर की कविता में मूल्यों की तलाश करना ही मेरा मुख्य सरोकार है।

कबीर की कविता मानव समाज और मानव जीवन से जुड़ी हुई कविता है। मानव उनकी कविता का केन्द्रबिन्दु है। मानव को छोड़कर न तो वे समाज की मीमांसा करते है और न ही जीवन की। समाज और जीवन सापेक्ष रूप से कविता की वस्तु से जुड़े रहते है। समाज मानव जीवन को व्यवस्थित करने की नियोजना करता हैं। जीवन को व्यवस्थित और गतिशील बनाने की पूरी प्रक्रिया समाज के सामाजिक–आर्थिक ढाँचे पर निर्भर होती है। संस्कृति का अस्तित्व समाज में भौतिक और बौद्धिक तत्वों के एक निश्चित योग के रूप में होता है। जिनसे वह भौतिक तथा बौद्धिक वातावरण तैयार होता है, जिनसे मनुष्य जीवन बिताते और काम करते है। मानव मूल्य कहीं से टपक नहीं पड़ते, बल्कि वह अपने सामाजिक–आर्थिक–सांस्कृतिक परिवेश और समय से उपजते है। वे बाह्यारोपित वस्तु न होकर, जीवन के सन्दर्भ में विकसित होते है। लुकाय मानता है कि मानव प्राणी का एक दूसरे के साथ वास्तविक रिश्ता एक सामाजिक जरूरत है, जिसको अपने आप में भी नहीं जानता, जिसको उसके कार्य, विचार और गतिविधिया संचालित करते हैं।

- कबीर की ब्रह्म सम्बन्धी अवधारणा

कबीर की विचारधारा का सबसे क्रान्तिकारी मुद्धा उनका निर्गुण राम है। कबीर जिस जमाने में पैदा हुए थे उन दिनों उत्तर भारत में सगुण वैष्णव भक्ति का व्यापक प्रचार हो रहा था। कबीर इस प्रचार और इस प्रचार की कमजोरी दोनों से परिचित थे। कबीर स्वभाव और वृत्ति के भक्त थे। अतः उपने परम प्रिय राम की स्वरूप–कल्पना या स्वरूप–दर्शन में उन्होंने अपने स्वभाव, अपनी वृत्ति, अपनी समय और अपने अनुभवों को निरन्तर वरीयता दी है। कबीर ने निर्गुण राम की भक्ति का उपदेश दिया है और श्रामश नाम के जप को इस भक्ति का साधन बतलाया है। उन्होंने बड़ी साफ शब्दावली में कहा है कि तीनों लोको में जिस दशरथ सुत राम का बखान किया जाता है, राम नाम का मर्म उससे भिन्न है। दशरथ सुत राम ही नहीं, उन दिनों विष्णु के जिन–जिन अवतारो को ब्रह्म मानकर सगुण वैष्णव–भक्त उनकी भक्ति का प्रचार कर रहे थे उनमें से किसी को भी ब्रह्म मानने से कबीर ने इन्कार किया है। उनका कहना है कि मेरा राम दशरथ के घर अवतार लेकर नहीं आया, उसने लंका के राजा को नहीं सताया। वह देवकी की कोरव में पैदा नही हुआ। वह न ग्वालों के साथ फिरा, न उसने गोवर्द्धन पर्वत को उठाया। बामन (बौना) बनकर उसने बलि को नहीं छला, न वराह रूप में पृथ्वी और वेद का उद्वार किया। न वह गंडक का शलिग्राम है न कोल, कच्छप या मत्स्य के रूप में अवतरित होने वाला है। बदरीनाथ में बैठकर उसने ध्यान नहीं लगाया, परशुराम के रूप में उसने क्षत्रियों को सताया न उसने द्वारावती में शरीर त्याग किया न उसका शरीर जगन्नाथ पुरी में गाड़ा गया। कबीर सोच–समझकर कहता है कि यह सब ऊपरी व्यवहार है।

- वर्तमान सन्दर्भ में कबीर की प्रासंगिकता

eISSN 2581-8996
ONLINE
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 07, Special Issue 01, February 2024

आधुनिक युग में विज्ञान का बहुत अधिक प्रचार और प्रसार हो चुका है। मानव चाँद पर पहुँच गया है। और अन्य ग्रहों पर पहुँचने का प्रयास कर रहा हैं प्रगतिवादियों के साहित्य ने तो ईश्वर के अस्तित्व को ही नकार दिया है। ऐसे समय में मध्यकालीन चर्चा, ईश्वर भक्ति की चर्चा भला किसे अच्छी लगेगी। कौन पढेगा इनके साहित्य को? लेकिन वे लोग भूल जाते है। कबीर केवल जीव, जगत, बह्मा, माया तक ही सिमिट कर नहीं रहे है, अपितु वे साढ़े पाँच सौ साल सौ वर्ष पहले आज के समय में काम आने वाली बातें भी कहते रहे है। कबीर की प्रासंगिकता को लेकर बहुत पहले श्काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग की परिचर्चा गोष्ठी में डॉ. शुकदेव सिंह ने श्कबीर साहित्य की प्रासंगिकताश शीर्षक से एक निबंध पढ़ा। कबीर साहित्य की प्रांसगिकता शीर्षक निबंध में डॉ. शुकदेव सिंह लिखते है– श्हिन्दू–मुस्लिम साम्प्रदायिकता के खिलाफ आवाज उठाने वाले पहले संत, विचारक और कवि कबीर ही हैं, रूढ़ धार्मिक शास्त्रों, पूजा, उपासना सम्बन्धी जडताओं, मंदिर मस्जिद विषयक अंध आस्थाओं, जाति वर्ण सम्बन्धी फर्को और तमाम तरह के भारतीय जीवन के अन्तर्विरोधें को उन्होंने निर्ममता के साथ अस्वीकार कर दिया था। आम आदमी के लिए, सम्पूर्णजन के लिए वे सभी स्तरों पर नये आदर्शों की सृष्टि करते हुए भी नयी नैतिक लड़ाई लड़ रहे थे। वह सारी लड़ाई उन्होंने कविता के निहायत मुलायम और तेज हथियार से लड़ी थी। यह लड़ाई लगातार चलने वाली लड़ाई है जिसे तरह–तरह के शोषणों के खिलाफ सर उठाने वाली इंसानियत बराबर लड़ती रहती है। कबीर और इंसानियत हम शक्ल चीजें है। हर सही आदमी के साथ होता है तो कबीर जैसी ताकतों के साथ भी होता है और सही व्यवस्था जब वास्तविक और न्यायपूर्ण होती हैं तो कबीर की व्यवस्था भी साथ होती है।

हम कह सकते हैं कि कबीर का साहित्य आज भी प्रासंगिक है, क्योंकि उन्होंने जिस राम शब्द को हमें दिया वह किसी एक साम्प्रदायिक रूप में श्बंधताश नहीं। वह तो बूझने वाले के लिए आना ही बना रहता है। कबीर साहित्य जहाँ लोक जीवन की धरोहर है, वहाँ साम्प्रदायिकता के खिलाफ लड़ाई का बिगुल भी है। कबीर धर्म व्यवस्था, वर्ग व्यवस्था और जाति व्यवस्था का जो विरोध करते है। यदि उन्हें अपना लिया जाए तो शाय फिर कभी मंदिर बनाने और मस्जिद तोड़ने की बात न उठे। इसलिए भी कबीर प्रांसागिक है।

आज जरूरत इस बात की है कि कबीर साहित्य को शुद्ध साहित्यिक दृष्टि से न जाँच के वह एक संघर्ष कथन है, उसकी धार कितनी पैनी है। कबीर अपनी तकलीफ के आधार पर दूसरों की तकलीफ समझते है। अपनी भूख, प्यास, उपेक्षा और सामाजिक अत्याचार के वजन पर आम आदमी को समझने का प्रयास करते है। अतः कबीर को समझने से पहले आदमी बनना है और समझने के बाद भी आदमी रहता है। तभी कबीर को ठीक ढंग से समझा जा सकता है और कबीर की उपादेयता को आँका जा सकता है।

निष्कर्षतः–

कहा जा सकता है कि उन्होंने तत्कालीन पशु मानव को सही मनुष्य बनने का रास्ता दिखलाकर उसे सम्पूर्ण मानव बनाने का जो प्रयास किया वह आज भी उतना ही आवश्यक है जितना कि उनके

eISSN 2581-8996
ONLINE
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 07, Special Issue 01, February 2024

युग में था। अतः कुल मिलाकर कहा जा सकता है कि इनका साहित्य जितना कारगर इनके युग में था, उतना ही आज के युग में भी है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची–

(1) कवीर वाणी सत्य ज्ञानामृत लालचन्द्र दूहन जिज्ञासु–पृष्ठ–143

(2) कबीर ग्रन्थावली (आठवा संस्करण)– डा. श्याम सुन्दर दास पृष्ठ– 31–34

(3) कबीर – हजारी प्रसाद द्विवेदी –पृष्ठ 108–9

(4) कबीर मीमांशा – डॉ रामचन्द्र तिवारी, पृ–141

(5) कबीर – ग्रन्थावली – डॉ पारसनाथ तिवारी पृ. 106

(6) कबीर वचनावली– अयोध्या सिंह उपाध्याय हरिऔधश पृष्ठ–144

(7) कबीर वाली सत्य – ज्ञानामृत – लालचन्द्र श्दूहनश जिज्ञासू. पृष्ठ –108

(8) हिन्दी साहित्य का इतिहास – डॉ हरिशचन्द्र शर्मा, डॉ. रामनिवास गुप्त–पृष्ठ– 261

(9) कबीर साहित्य की प्रासंगिकता –पृष्ठ–20 (सं. विवेकदास) सम्पादकीय

(10) श्याम सुन्दर दास – कबीर ग्रन्थावली पृष्ठ–49